ISSN : 2321-6131

वर्ष : 6 अंक : 11-12 जनवरी-दिसम्बर, 2018

समवेत

साहित्य, संस्कृति एवं शिक्षा से संबद्ध
समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका

(Peer-Reviewed Half Yearly Research Journal)

संपादक
डॉ. नवीन नंदवाना

REDMI NOTE 6 PRO
MI DUAL CAMERA

अनुक्रम

1. भवानीप्रसाद मिश्र : प्रकृति-जीवन के अक्षय स्रोतों से पगी कविताएँ 1
प्रो. शैलेन्द्र कुमार शर्मा

2. 'अंतिम अरण्य' में चित्रित पाश्चात्य सभ्यता 10
डॉ. बी. संतोषी कुमारी

3. विशिष्ट बालकों की शिक्षा 23
दीपिका शर्मा

4. संस्कृत के रूपकों में चित्रकला 29
डॉ. जी. एल. पाटीदार

5. स्त्री विमर्श का सैद्धांतिक पक्ष और समकालीन हिंदी आलोचना 34
डॉ. ज्योति शर्मा

6. दुनिया को बदलने की ज़िद : ज़िद करो दुनिया बदलो 42
नीना यादव

7. अपने समय, समाज और इतिहास से बाखबर जसिंता केरकेट्टा की कविताएँ 52
डॉ. वन्दना झा

8. गौरी पूजन की सुदीर्घ परम्परा 59
वनिता वागरेचा

9. मानव सभ्यता के समक्ष चुनौतियाँ और नरेश मेहता का काव्य 65
प्रो. सुरेश चन्द्र

10. इंसानी चुनौतियाँ और असगर का नाटक साहित्य 72
भागीरथ कुलदीप

11. संत साहित्य में चित्रित नारी दृष्टि 81
डॉ. नवीन नन्दवाना

संस्कृत के रूपकों में चित्रकला

डॉ. जी. एल. पाटीदार*

संस्कृत और कला-

वाणी का अरुणोदय संस्कृत वाक् में ही हुआ है। संस्कृत गिराम् ही ''अहो वसुधैव वंशः।''[11] अर्थात् अहो पूरी पृथ्वी ही एक परिवार है, का सन्देश देती है। संस्कृत साहित्य अतिप्राचीन होने के साथ ही साथ कला-पक्षीय साहित्य को भी हमारे भीतर समाहित किए हुए है। संस्कृत के कई ग्रंथों में कला-पक्षीय चित्रण उपलब्ध होता है। इहलोक में शब्द-सृष्टि के पूर्व भी अपने भावों को अभिव्यक्त करने का प्रमुख माध्यम कला ही रही होगी क्योंकि इसी में अपने अन्तरम भावों को समझने-समझाने का सर्वश्रेष्ठ सामर्थ्य है। महाकवि भर्तृहरि ने तो कला विहीन व्यक्ति को बिना पूँछ और सींग का साक्षात् पशु कहा है- ''साहित्यसंगीतकला विहीन साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः। तृणं न खादन्नपि जीवमानस्तद्भागधेयं परमं पशूनाम्।।''[12] और भी ''गीत कला साहित्यहूँ नहीं सीख्यो नर जौन। सींग पूँछ बिन पशू पर तृण नहिं खाते तौन।।''[13]

कला शब्द की व्युत्पत्ति और कलाएँ-

कला शब्द की व्युत्पत्ति स्त्री कल संख्याने और 'अजाद्यतष्टाप्'[14] से टाप् (आ) प्रत्यय के संयोग से हुई है। कला का मूल अर्थ है, किसी वस्तु का छोटा खंड या

---

* सहायक आचार्य, संस्कृत-विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

टुकड़ा। कल् धातु का प्रयोग आवाज करना, शब्द करना या ध्वनि अर्थ में प्रयुक्त होता है। ''कलयति स्वरूपं आवेशयति वस्तुनि वा।''[5] अर्थात् कला वस्तु के स्वरूप को अलंकृत करती है। ''कलाति ददाति इति कला कला।''[6] कला 'क' और 'ला' वर्ण से बना है कला= 'क' कामदेव, सौन्दर्य व आनन्द को, 'ला' देना अर्थात् सौन्दर्य की अभिव्यक्ति द्वारा अंत:करण को सुख प्रदान करने वाली वस्तु ही कला है।

''कलाओं के संख्यात्मक ज्ञान पर एक अवलोकन करने पर महर्षि वात्स्यायन ने चौसठ कलाओं की बात करते हुए वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीतकला एवं काव्यकला ये पाँच प्रमुख बताई हैं।''[7] कलाओं के दो भाग है- ललितकला और शिल्पकला। चित्रकला, ललितकला का ही भाग है। संस्कृत के समस्त रूपकों में ललितकला के दर्शन द्रष्टव्य है। इन्हीं रूपकों में कई स्थानों पर चित्रकला के दर्शन भी मिलते हैं।

संस्कृत के प्रमुख रूपक-

संस्कृत नाट्य साहित्य लोकोपदेशाय, लोकहिताय, राष्ट्रहिताय एवं दु:खनिवारणार्थ अपने विचारों को शीघ्रप्रेषित करने का प्रधान माध्यम रहा है। यह नाट्य साहित्य विस्तृत होने के कारण यहाँ पर अभिज्ञानशाकुन्तलम्, उत्तररामचरितम्, रत्नावली, मृच्छकटिकम् एवं स्वप्नवासवदत्तम् रूपकों में कलापक्षीय चित्रकारी को शब्दतूलिका से चित्रित करेंगे।

संस्कृत के प्रमुख रूपकों में चित्रकला-

यहाँ पर संस्कृत नाट्य साहित्य में चित्रकारीय चित्रण को निम्न रूपकों में एक चित्रकार के चिंतन की दृष्टि से दृष्टिपटल के पट-पेटिका पर चित्रित करेंगे।

(i) **अभिज्ञानशाकुन्तलम्** - यह महाकवि कालिदास का विश्व प्रसिद्ध सात अंकों का नाट्य रत्न है। कालिदास सौंदर्य के महाकवि हैं। उन्होंने शब्दरूपी तूलिका से शकुन्तला के सौंदर्य को रंगरूप रंगमंच पर रंगा है। कालिदास ने ''आद्या:सृष्टि:।''[8] कहकर ब्रह्मा की अद्भुत सृष्टि सौन्दर्यातिशय शालिनी शकुन्तला को चित्रित किया है।

नाटक के दूसरे में अंक ''स्त्रीरत्नसृष्टिरपरा।''[9] कहकर राजा दुष्यंत कहते हैं कि यह शकुन्तला अद्वितीय स्त्रीरत्न की सृष्टि प्रतीत होती है तथा मुझे ऐसा लगता है कि ''चित्रे निवेश्य परिकल्पित।''[10] अर्थात् विधाता ने सर्वप्रथम चित्रकारी कर चित्र बनाया

होगा और पश्चात् इस अलौकिक सौंदर्य में प्राण का निर्माण किया होगा। यहाँ पर भी कालिदास के चित्रकला-चित्रकारी प्रेम के दर्शन-दर्शनीय है।

इस नाटक के चतुर्थ अंक में मुग्धा नायिका "शकुन्तला के लिए वनस्पतियों से पुष्पों को ले कर।"[11] शृंगार करते हुए उसकी सखियाँ कहती है- "चित्रकर्मपरिचयेनांगेषु त आभरणविनियोगं कुर्वः।"[12] अर्थात् चित्रों की रचनाओं के ज्ञान से तुम्हारे अंगों में आभूषणों को हम दोनों सखियाँ पहनाती हैं। यहाँ दोनों सखियाँ अनुसूया-प्रियंवदा चित्रकारी के चित्रों को देखकर शकुन्तला को अलंकृत करती हैं। यहाँ कालिदास ने शृंगार कर्म के लिए चित्रकारी के महत्त्व को शब्दकूँची से चित्रित किया है।

(ii) **उत्तररामचरितम्** - यह महाकवि भवभूति का करुणरस में रचित सात अंकों का सर्वश्रेष्ठ नाटक है। भवभूति ने नाटक के प्रथम अंक का नाम ही 'चित्रदर्शन'[13] रखा है। इस अंक में 'अर्जुन'[14] नामक चित्रकार ने राम-सीता के पूर्वार्द्ध जीवन पर चित्र बनाए हैं, जिसमें विवाह, वनवास, मिथिला, अयोध्या, पंचवटी इत्यादि वृत्तांतों को चित्रित किया है, जिसे राम-सीता और लक्ष्मण पुनः स्मरण करते देख रहे हैं। इस प्रकार चित्र बनवाना और देखना राम और लक्षण के चित्रकला के प्रेम को उद्घाटित करता है। राम कहते हैं- "क्लिष्टो जनः किल जनैरनुरंजनीयः।"[15] अर्थात् दुःखी लोगों का उनके संबंधी लोगों को मनोरंजन करना चाहिए। यहाँ भी सीता को चित्र दिखाने की बात कही है। इस प्रकार श्रीराम भी मानते हैं कि चित्रकला आनंद एवं मनोविनोद का अनुरंजन करने वाली कला है।

(iii) **रत्नावली** - यह महाकवि हर्षवर्धन की संस्कृत नाट्य साहित्य की सर्वश्रेष्ठ चार अंकों की नाटिका है। दूसरे अंक में निपुणिका सुसंगता से कहती है कि "सखि! दृष्टा मया ते प्रियसखी सागरिका गृहीतचित्रफलकवर्तिकासमुद्गका समुद्विग्नेव कदलीगृहं प्रविशन्ती।"[16] अर्थात् सखि ! मैंने तुम्हारी प्रियसखी सागरिका को चित्रपट, कूँची एवं पेटिका लिए उद्विग्न-सी केलागृह में प्रवेश करते हुए देखा है। निश्चित ही वह सब सामग्री लेकर चित्र बनाने ही गयी थी।

यहाँ कवि ने नाटिका की नायिका सागरिका (रत्नावली) को एक चित्रकार के रूप में बताया है। वह स्वयं चित्रकला में इतनी निपुण थी कि वह राजा उदयन का चित्र बनाती है तथा उसकी सखी सुसंगता "किं पुनः शून्यमिवैतच्चित्रं प्रतिभाति।"[17] किंतु यह चित्र सूना लग रहा है, ऐसा कहकर उस चित्र के पास सागरिका (रत्नावली) का चित्र भी बना देती है और राजा उदयन के सम्मुख प्रदर्शित करती है।

इस प्रकार सागरिका (रत्नावली) अपने प्रथम प्रेम भाव को सर्वप्रथम राजा उदयन के सम्मुख चित्र बनाकर प्रदर्शित करती है। राजा उदयन भी चित्र में ही नायिका के सौंदर्य को देखकर मुग्ध हो जाता है। वह कहता है ''कोयं चित्रगता राजहंसीव।''[18] चित्र में बनी हुई राजहंसी के समान यह कौन मेरे हृदय में समा रही है। इस प्रकार चित्रकारी का सुन्दर चित्रण यहाँ चित्रित किया गया है। न केवल नायिका अपितु सखी सुसंगता को भी एक उच्चकोटि चित्रकार के रूप में बताया है।

(iv) **मृच्छकटिकम्** – यह महाकवि शूद्रक विरचित दस अंकों का प्रकरण नाटक है। इस नाटक के चतुर्थ अंक में ''नायिका वसन्तसेना मदनिका के साथ नायक चारुदत्त का फोटो देखती रंगमंच पर उपस्थित होती है।''[19] वह कहती है- ''सुसदृशी इयं चित्राकृतिः आर्यचारुदत्तस्य:।''[20] अर्थात् आर्य ! चारुदत्त की यह चित्रकृति (फोटो) दर्शनीय एवं अनुरूप है। वह पुनः कहती है कि ''इदं तावत् चित्रफलकं मम शयनीये स्थापित्वा।''[21] अर्थात् इस फोटो को मेरे बिछावन (बिस्तर) पर रख दो। इस नाटक की नायिका गणिका वसन्तसेना नृत्य, चित्रकला गीतादि कलाओं में तथा नायक चारुदत्त संगीतकला का प्रेमी था। यहाँ चित्रकला की चतुराई भी दिखाई देती है। और वसन्तसेना का चित्रकारीय प्रेम भी।

(v) **स्वप्नवासवदत्तम्** – यह महाकवि भास का छः अंकों का विश्वविख्यात नाटक है। राजा उदयन संगीत प्रेमी एवं वीणा वादक थे। उन्होंने ही वासवदत्ता को वीणा सिखाई थी तथा राजा उदयन ने ''यस्या घोषवती प्रिया।''[22] कहकर वासवदत्ता के वीणा-घोषवती से प्रेम को बताया है। नाटक के छठे अंक में धाय कहती है कि ''अनग्निसाक्षिकं वीणाव्यपदेशेन दत्ता।''[23] अर्थात् अग्नि को साक्षी बनाए बिना ही वीणा सिखाने के बहाने वासवदत्ता तुम्हें दे दी गई थी। इसी अंक में धाय द्वारा उदयन और वासवदत्ता के विवाह का एक चित्र राजा महासेन को भेंट करते बताया गया है। धाय कहती है- ''अथ चावाभ्यां तव च वासवदत्तायाश्च प्रतिकृतिं चित्रफलकायामालिख्य विवाहो निर्वृत:।''[24] अर्थात् उसके पश्चात् हमने तुम्हारा (उदयन) और वासवदत्ता का चित्र एक चित्रपट पर बनवाकर विवाह कर दिया था। यह राजाओं के कला प्रेम और तत्कालीन चित्रकला के महत्त्व को इंगित करता है। उस समय भी प्रेम का मूर्त रूप चित्रकला ही थी जो अपने मनोभावों को प्रेम रूप में साकार करती-कराती थी।

अन्ततोगत्वा हम निष्कर्ष रूप में यह कह सकते हैं कि संपूर्ण संस्कृत-साहित्य विभिन्न कलाओं से अलंकृत-अलंकार्य ही है, उसमें रूपक भी। कलाओं एवं संस्कृत रूपकों को अलग कर दिखा पाना पाषण धर्म-सा है। संस्कृत रूपकों की रचना-सृष्टि

अतिविस्तृत है इसलिए यहाँ कुछ प्रमुख रूपकों में केवल चित्रकला पक्ष को ही दृष्टिपटल पर ला देने का प्रयास किया गया है। यद्यपि एक-एक नाटक ही साथ में विविध कलाओं को संजोये-संवारे हुए है। तथापि इनमें सार रूप में चित्रकारीय पक्ष को ही पट पटल पर रखा है और इस शोधात्मक विवेचन से यह सिद्ध होता है कि संस्कृत के रूपकों में यह कार्य सौंदर्यात्मक रंग-बिरंगे दृश्यों से हुआ है। शब्दों को दृश्यों में और दृश्यों को अंकों में ढालकर चित्रकारीय कला को परोसा है। इस प्रकार महाकवियों ने शब्दकमल युक्त कल्पना से जो दृष्टिपटल पर शब्द चित्रकारी की है वह मंत्रमुग्ध कर देती है।

संदर्भ सूची

1. राजेंद्र प्रसाद भट्ट : *गुर्जर-भूकम्प-शतकम्* - 57
2. भर्तृहरि : *नीतिशतकम्* -12
3. बाबू हरिदास वैद्य : टीकाकार *नीतिशतकम्* - 12 के बाद, पृष्ठ 48
4. पाणिनी : *लघुसिद्धान्तकौमुदी* -4/1/4
5. डॉ. राजकिशोर सिंह एवं उषा यादव : *प्राचीन भारतीय कला एवं संस्कृति*, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1982, पृष्ठ 16-17
6. वही, पृष्ठ 16
7. वास्त्यायन : *कामसूत्र* -2/2/2
8. कालिदास : *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* -1/1
9. वही, -2/9
10. वही, -2/9
11. वही, -4/4 के बाद गद्य (शकुन्तलाहेतोर्वनस्पतिभ्यः कुसुमान्याहरतेति।)
12. वही, -4/5 के बाद का गद्य भाग
13. भवभूति : *उत्तररामचरितम्* -प्रथम अंक का नाम
14. वही, -1/12 की वृत्ति भाग
15. वही, -1/14
16. श्रीहर्ष : *रत्नावली* -2/1 के पूर्व का गद्य
17. वही, -2/1 के पूर्व का गद्य
18. वही, -2/9
19. शूद्रक : *मृच्छकटिकम्* -4/1 से पहले वृत्ति भाग
20. वही, -4/1 से पहले वृत्ति भाग
21. वही, -4/3 के बाद का वृत्ति भाग
22. भास : *स्वप्नवासवदत्तम्* -6/3
23. वही, -6/11 के बाद वृत्ति भाग
24. वही, -6/11 के बाद वृत्ति भाग